नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय,

प्रयागराज

अध्ययन सामग्री – प्रेस विधि

Press Laws

मूल अधिकार—अमेरिका और इंग्लैण्ड में व्यक्ति के अधिकारों से संबंधित विषय को देखने में अंतर है। इंग्लैण्ड के लोग कार्यपालिका की शक्ति के प्रयोग से व्यक्ति के अधिकारों को संरक्षण देने को लेकर चिंतित थे, जबकि अमेरिकी संविधान निर्माता कार्यपालिका और विधान मंडल के अत्याचार से आशंकित थे। अमेरिका का अधिकार विलेख विधान मंडल पर उतना ही आबद्धकर है जितना कार्यपालिक पर। परिणामस्वरूप अमेरिका में न्यायिक सर्वोच्चता की स्थापना हुई। ठीक उसी तरह जैसे कि इंग्लैण्ड में संसदीय सर्वोच्चता है। अमेरिका में न्यायालय कांग्रेस के किसी अधिकार विलेख के किसी उपबंध के उल्लंघन को असांविधानिक घोषित करने के लिए सक्षम है। भारत के संविधान ने भाग 3 में मूल अधिकार समाविष्ट किए हैं। जो न केवल कार्यपालिका बल्कि विधान मंडल की शक्तियों पर भी लगायी गई मर्यादाओं के रूप में है। भारतीय संविघान संसदीय प्रभुता और न्यायिक सिद्धांतों के बीच एक सामंजस्य स्थापित करता है। भारत में संसद को उस अर्थ में प्रभुत्वसंपन्न नहीं कहा जा सकता जिस अर्थ में इंग्लैण्ड की पार्लियामेंट को विधिक रूप से सर्वशक्तिमान माना जाता है।

भारतीय संविधान द्वारा अधिरोपित मर्यादाओं और प्रतिषेधों के अधीन विधान बनाने का अधिकार संसद को है। जैसे, मूल अधिकार, विधायी शक्तियों का विवरण आदि। यदि इन मर्यादाओं का अतिक्रमण हो जाता है तो उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय ऐसी किसी भी विधि को असंवैधानिक और शून्य घोषित कर सकते हैं। भारतीय संविधान के भाग 3 में अनुच्छेद 12 से 35 तक मूल अधिकारों का वर्णन किया गया है। अनुच्छेद 12 में राज्य की परिभाषा दी गयी है। अनुच्छेद 13 में मूल अधिकारों से असंगत तथा उनका अल्पीकरण करने वाली विधियां उल्लंघन की पुनर्विलोकन की शक्ति प्रदान करता है। भारत में मूल अधिकार निम्नलिखित प्रकार से हैं –

1. समता का अधिकार, (अनुच्छेद 14 से अनुच्छेद 18 तक)
2. स्वतंत्रता का अधिकार, (अनुच्छेद 19–22)
3. शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23, 24)
4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25–28)
5. संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार (अनुच्छेद 29,30)
6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32)

प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के नेतृत्व वाली सरकार ने संपत्ति का अधिकार जो कि 7वां मूल अधिकार था, जिसे 44वें संशोधन 1978 द्वारा अनुच्छेद 19–1–च और 31 का लोप कर दिया या समाप्त कर दिया। अब सम्पत्ति का अधिकार मूल अधिकार न होकर संविधान के अनुच्छेद 300–क के अंतर्गत विधिक अधिकार के रूप मान्य किया गया है। उच्च न्यायालय मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए अनुच्छेद 226 के अंतर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, उत्पेक्षण व अधिकार पृच्छा लेख जारी कर सकता है। मूल अधिकार आत्यंतिक अधिकार नहीं है। इन अधिकारों के प्रयोग पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाये जा सकते हैं। संविधान में उन परिस्थितियों का स्पष्ट उल्लेख किया गया है जब राज्य को यह अधिकार होगा कि जनसाधारण के हित में नागरिकों के मूल अधिकारों को निलम्बित कर सके या उनके प्रयोग पर निर्बन्धन लगाया जा सके। नागरिकों के मूल अधिकारों को निम्नलिखित परिस्थितियों में निलम्बित किया जा सकता है–

1. प्रतिरक्षा सेना के सदस्यों के सम्बन्ध में,
2. सैन्य विधि लागू होने की स्थिति में,
3. संविधान संशोधन के द्वारा, तथा
4. आपात काल घोषित होने की स्थिति में।

भारतीय संविधान नागरिकों को स्वतंत्रता सम्बन्धी विभिन्न अधिकार प्रदान किए हैं। अनुच्छेद 19–1 में नागरिकों को प्राप्त जिन छः मूलभूत स्वतंत्रताओं का वर्णन किया गया है वे निम्नलिखित प्रकार से है–

क– वाक्–स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य,

ख– शान्तिपूर्वक व निरायुध सम्मेलन,

ग– संगम या संघ बनाने का,

घ– भारत के राज्यक्षेत्र में अबाध संचरण,

च– भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने, तथा

छ– कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारोबार करने का अधिकार प्राप्त होगा।

यहां नागरिक शब्द से अभिप्राय भारत के नागरिकों को प्राप्त स्वतंत्रताओं से है। विदेशी को नहीं।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता– भारत का संविधान वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की प्रत्याभूति (गारंटी) देता है। वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की आधारशिला है। इसका अर्थ है– शब्दों, लेखों, मुद्रण, चिन्हों या किसी अन्य प्रकार से अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए जिन माध्यमों का सहयोग लिया गया है वे सभी अभिव्यक्ति शब्द की परिभाषा के अंतर्गत आते हैं। केवल अपने ही विचार नहीं बल्कि दूसरों के विचार भी अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता। इस प्रकार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अंतर्गत प्रेस की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है। संविधान में प्रेस की स्वतंत्रता की प्रत्याभूति देने के लिए कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है क्योंकि प्रेस की स्वतंत्रता, अनुच्छेद 19–1–क में प्रत्याभूत अभिव्यक्ति की व्यापक स्वतंत्रता में सम्मिलित है।

समाचारपत्र विचारों को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। लोकतंत्र की सफलता के लिए प्रेस की स्वतंत्रता अपरिहार्य है। भारत के संविधान में वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। किन्तु, जैसाकि अमेरिका के संविधान में प्रेस की स्वतंत्रता को अभिहित किया गया है, वैसे भारत में प्रेस की स्वतंत्रता का स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

अमेरिका के संविधान में 'वाक् और प्रेस की स्वतंत्रता' का उल्लेख किया गया है, जबकि भारत के संविधान में वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लेख है। यानि प्रेस की स्वतंत्रता का स्पष्ट उल्लेख न होने के बावजूद भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में ही यह अंतर्निहित है। उच्चतम न्यायालय ने सन् 1950 में रमेश थापर बनाम मद्रास राज्य तथा ब्रजभूषण बनाम दिल्ली राज्य के मामले में यह अभिनिर्धारित कर दिया था कि संविधान के अनुच्छेद 19–1–क में लिखित अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में प्रेस की स्वतंत्रता भी शामिल है। न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया कि इस बात से कोई अंतर नहीं पड़ता है कि जहां अमेरिका के संविधान में वाक् और प्रेस की स्वतंत्रता का उल्लेख किया गया है वहां भारतीय संविधान में वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लेख है।

किन्तु, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आत्यंतिक नहीं है। यानि, प्रेस की स्वतंत्रता एक नागरिक की स्वतंत्रता से बढ़कर नहीं है। यह अनुच्छेद 19–2 में अंतर्विष्ट सीमाओं के अधीन है। राज्य, प्रेस की स्वतंत्रता पर राज्य की सुरक्षा, भारत की प्रभुता और अखंडता, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध

लोक व्यवस्था, शिष्टाचार या सदाचार अथवा न्यायालय अवमान, मानहानि या अपराध उद्दीपन के सम्बन्ध में विधियां बना सकता है। किसी भी स्वतंत्रता की तरह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी असीमित नहीं हो सकती। यदि प्रेस की स्वतंत्रता का उपयोग या दुरूप्योग इस प्रकार से किया जाए कि उससे समाज के व्यापक हितों को आघात पहुंचता हो तो इस स्वतंत्रता पर रोक लगायी जा सकती है। अनुच्छेद 19–2 के तहत युक्तियुक्त निर्बधंन लगाए जा सकते हैं। युक्तियुक्तता का निर्णय करने की शक्ति न्यायालय को दी गई है। उच्चतम न्यायालय द्वारा तय की गई युक्तियुक्तता की कसौट, इस प्रकार से है– जिस अधिकार के अतिक्रमण की बात की गई हो उसका प्रकार, लगाये गयें निर्बंधन का मूल उद्देश्य उसके द्वारा जिस बुरायी को दूर करना हो उसका विस्तार और सीमा, लगाई गई रोक का अनुपात और समकालीन परिस्थितियां, इन सबको ध्यान में रखकर निर्णय किया जाना चाहिए।

प्रथम प्रेस आयोग–22 सितंबर 1952 को न्यायमूर्ति श्री जी0एस0 राजाध्यक्ष की अध्यक्षता में गठित प्रथम प्रेस आयोग की रिपोर्ट 14 जुलाई 1954 को पेश की। प्रथम प्रेस आयोग ने प्रेस के विकास को प्रोत्साहित करने, बाहरी दबावों से उनकी रक्षा, संपादकीय स्वतंत्रता की रक्षा तथा समाचारों के प्रस्तुतीकरण पारदर्शिता के लिए भारत में प्रेस परिषद् के स्थापना की संस्तुति की। छोटे समाचार पत्रों के विकास तथा उनकी जांच के लिए सरकार ने श्री आर0 आर0 दिवाकर की अध्यक्षता में एक जांच समिति गठित की जिसने पृष्ठानुसार मूल्य लागू करने की पुनः आवश्यकता पर बल दिया। समिति ने सजावटी विज्ञापनों का 50 प्रतिशत भाग लघु समाचार पत्रों को दिये जाने की अनुशंसा की। एकाधिकार की प्रवृत्ति के विरूद्ध समाचार पत्रों को सहयोग देने के लिए सरकार ने समाचार पत्र वित निगम नामक स्वायत्तशासी संगठन बनाने का निर्णय लिया। इस निगम से वित्तीय संघर्षों से जूझते छोटे एवं मध्यम श्रेणी के अखबारों को भी सहायता देने की व्यवस्था की गई थी, लेकिन वह समाप्त हो गया था। ट्रस्टीशिप पर प्रेस आयोग ने सुझाव दिया था। विज्ञापनों के लिए आचार संहिता बनाने के लिए विज्ञापन परिषद् बनाने का सुझाव भी दिया था।

प्रत्येक समाचार पत्र का अपनी समस्त आय–व्यय, लाभ–हानि का विवरण अलग–अलग तैयार करना होगा तथा यह प्रत्येक संस्करण पर लागू होगा। पत्र प्रकाशन पर जिले स्तर पर प्रोत्साहन मिले, राज्य व्यापार निगम के माध्यम से ही अखबारी कागज बेचा जाए, पत्रकारों के नियमित वेतन, कार्य के घंटे का निर्धारण तथा उद्योगों पर लागू होने वाले नियम लागू हों, तथा प्रेस उद्योग पर से अन्य उद्योग के मालिकों का नियंत्रण तथा प्रभाव कम से कम किया जाए।

द्वितीय प्रेस आयोग–

दूसरे प्रेस आयोग की स्थापना 29 मई 1978 को न्यायमूर्ति श्री पी0 के0 गोस्वामी की अध्यक्षता में की गई थी। लेकिन, केंद्र में सरकार बदलने के कारण समिति ने त्यागपत्र दे दिया। उसके बाद 21 अप्रैल 1980 को न्यायमूर्ति के0 के0 मैथ्यू की अध्यक्षता में आयोग का पुनर्गठन किया गया। आयोग के गठन का मुख्य उद्देश्य था–प्रेस उद्योग के रूप में, संपादकीय स्वतंत्रता, प्रेस के घटकों के स्वामित्व का स्वरूप तथा वित्तीय ढांचा, समाचार पत्रों की निरंतरता, उद्योग से सम्बद्ध प्रतियोगिता तथा पाठकों को प्रामाणिक समाचार पाने तथा स्वतंत्र टिप्पणियों के अधिकार पर उनका प्रभाव, पत्र उद्योग की आर्थिक व्यवस्था, अखबारी कागज, मशीनें एवं अन्य निवेश, क्षेत्रीय भाषा के अखबारों(छोटे माध्यम)

का विकास, व्यावसायिक कर्मियों का प्रशिक्षण आदि बिंदु पर विचार करना था।

दूसरे प्रेस आयोग के द्वारा मुख्य सिफारिशें – प्रेस की भूमिका, सांप्रदायिक सद्भाव कायम करने, राष्ट्रीय जीवन धारा में विभिन्न वर्गों के सहयोग से निर्माण की ओर बढ़ने तथा सामाजिक, धार्मिक चेतना के स्वस्थ विकास के संदर्भ में अनेकों सुझाव दिये गए। विदेश संबंध, सुरक्षा से जुड़े संवेदनशील मामलों पर आयोग ने प्रेस से पूर्ण उत्तरदायित्व एवं नियंत्रण की अपेक्षा की है। आयोग ने विकासात्मक रिपोर्टिंग पर विचार किया, साथ ही सामाजिक, आर्थिक, समस्योन्मुखी अनुसंधानपरक रिपोर्टिंग को भी सराहा। आयोग का मानना है कि पत्रकार जगत इतना सामर्थ्यवान हो कि बाह्य एवं आंतरिक दबाव व अवरोधों से अपनी स्वतंत्रता की रक्षा कर सके।

आयोग ने प्रेस परिषद् की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए उसे दण्डात्मक शक्ति प्रदान करने की सिफारिश की। आयोग ने समाचार पत्र समूहों पर से विदेशी धन के प्रभाव को समाप्त करने के लिए कानूनों में संशोधन करने की सिफारिश की। छोटे और मध्यम आकार के समाचार पत्रों के प्रसार एवं विकास में सहयोग देने के लिए प्रेस आयोग ने समाचार पत्र विकास आयोग के गठन का सुझाव दिया।

सेंसरशिप अधिनियम, 1799 – गर्वनर जनरल लार्ड वेलेजली ने भारत का प्रेस से सम्बन्धित पहला सांविधिक विनियम 13 मई , 1799 को जारी किया । इस विनियम से पत्रों पर प्रकाशन पूर्व सेंसरशिप लगा दिया। इसके अनुसार –

❖समाचारपत्र को, सम्पादक, मुद्रक और स्वामी का नाम स्पष्ट रूप से छापना पड़ता था।

❖सम्पादक और संचालक के निवास स्थान का पूरा पता सरकार के सेक्रेटरी को लिखकर भेजना पड़ता था ।

❖रविवार को कोई पत्र प्रकाशित न हो।

❖जब तक सरकार का सचिव निरीक्षण न कर ले तब तक कोई पत्र न प्रकाशित किया जाय।

❖जो उपर्युक्त नियमों की अवहेलना करेगा उसे तत्काल देश से निष्कासित कर दिया जाएगा।

सचिव को भी यह अनुमति थी की सेना , जलपोत, माल अथवा धन के आने जाने के विषय में कोई जानकारी प्रकाशित करने की अनुमति न दे । न ही कम्पनी और अन्य भारतीय शक्तियों के आपसी सम्बन्धों के विषय में कोई जानकारी अथवा वह जानकारी जिससे कम्पनी के प्रदेश में रहने वाले व्यक्तियों में किसी प्रकार का असन्तोष अथवा भय फैले उसको छपने दे । 1807 ई॰ में यह अधिनियम पत्रिकाओं, पैम्पलेट तथा पुस्तकों, सभी पर लागू कर दिया गया

आम आदेश (जनरल ऑर्डर)– कम्पनी सरकार ने अप्रैल 1785 में जनरल ऑर्डर के शीर्षक से आम आदेश जारी किया, परिषद् के आदेशों और प्रस्तावों के प्रकाशन पर रोक लगा दिया। इस आदेश के साथ ही भारत में प्रेस पर रोक का सिलसिला शुरू हो गया।इसके तहत 1795 में पहली बार मद्रास गजट पत्र पर सेंसरशिप लगा।

लाइसेंस अधिनियम, 1823 – गवर्नर जनरल जॉन एडम ने प्रेस अध्यादेश जारी कर अखबारों पर लाइसेंस प्रणाली लागू किया।
इसके पहले 1818 में लॉर्ड हेस्टिंग्स ने अखबारों पर से सेंसरशिप हटा दिया था। उसके बाद 1823 में ही मेटकॉफ ने भारतीय समाचारपत्रों पर से सेंसरशिप हटा दिया था। इस कारण से उसे समाचारपत्रों का मुक्तिदाता कहा जाता है। हालांकि यह ज्यादा दिनों तक नहीं चल सका 13 जून 1857 में लॉर्ड केंनिंग ने पुनः लाइसेंस व्यवस्था लागू कर दी।

1857 के विद्रोह से उपजे आपात परिस्थिति से निपअने के लिए लाइसेंस व्यवस्था पुनः लागू की गई। इस कानून के तहत सरकार के पास यह अधिकार था कि वह अपने विवेक से लाइसेंस जारी करे या रद्द कर दे।

न्यायालय अवमानना (contempt of court)–संविधान के अनुच्छेद 19–2 में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल अधिकारों पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाने का अधिकार राज्यों को दिया गया है उसमें न्यायिक अवमानना भी शामिल है। संविधान के अनुच्छेद 129 में उच्चतम न्यायालय तथा 215 में उच्च न्यायालयों को अभिलेख न्यायालय घोषित किया गया है। इनका अवमान करने वालों को दण्डित करने का प्रावधान किया गया है। 1971 में न्यायालय अवमानना अधिनियम बनाया गया। न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 के अंतर्गत दो प्रकार के न्यायालय अवमानना बताया गया है–

1. सिविल अवमानना– न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2ख के तहत जानबूझ कर न्यायालय के निर्णय, निर्देश, आदेश, रिट, डिक्री या अन्य न्यायिक प्रक्रिया का उल्लंघन किया जाना सिविल अवमानना के अंतर्गत आएगा।

2. फौजदारी अवमानना– आपराधिक अवमानना से तात्पर्य, न्यायालय की विश्वसनीयता पर आघात पहुंचाने की प्रवृत्ति, न्यायिक कार्यवाही के प्रति पूर्वाग्रह उत्पन्न करने या हस्तक्षेप करने आदि को शब्दों द्वारा बोले गए, लिखे गए, संकेतों के द्वारा या दृश्य निरूपण के द्वारा अवमानना से है। इसके अलावा, न्यायाधीश पर अयोग्यता का आरोप लगाना, उनकी निष्पक्षता पर संदेह प्रकट करना, न्यायालय में विचाराधीन मामलों पर टिप्पणी करना तथा उससे संबंधित जज या पक्षकारों को प्रभावित करने या आक्षेप लगाना, गवाहों को धमकी देना, चोरी छिपे अदालती कार्यवाही की रिपोर्ट प्रकाशित करना तथा अदालती कार्यवाही का भ्रामक प्रकाशन आदि आपराधिक अवमानना माना जाएगा।

न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 3 से 9 तक के उपबंधों में बचाव का विविध दशाओं का प्रावधान बताया गया है। यह उन परिस्थितियों में लागू होगा जबकि, अदालती कार्यवाही की सत्य व तथ्यात्मक रिपोर्ट का प्रकाशन किया जाए, सार्वजनिक हितों में न्यायिक निर्णयों की विवेकपूर्ण टिप्पणी जबकि मामले की सुनवाई हो चुकी हो तथा उस पर निर्णय दिया जा चुका है, अदालत की अवमानना नहीं माना जाएगा।

धारा 12 में न्यायालय अवमानना हेतु दण्ड का प्रावधान है। अवमानना का दोषी पाये जाने पर छः मास की साधारण कैद अथवा दो हजार रूपये तक जुर्माना या दोनों सजाएं दी जा सकती हैं। यदि न्यायालय संतुष्ट हो जाए तो अभियुक्त के द्वारा माफी मांगे जाने पर उसे क्षमा किया जा सकता है या दण्ड कम किया जा सकता है।

न्यायालय की अवमानना का कानून प्रायः पत्रकारों के लिए संकट का कारण बन जाता है। समाचारपत्रों और पत्रकारों एवं अन्य संबंधित लोगों को अधिक सावधानी से कार्य करना पड़ता है। उनकी थोड़ी सी चूक न्यायालय अवमानना का कारण बन जाता है।

वर्नाक्यूलर प्रेस ऐक्ट, 1878– लार्ड लिटन ने भाषायी पत्रों के स्वर और तेवर को अपने लिए खतरनाक मानकर उसे दबाने के लिए देशी भाषा समाचारपत्र अधिनियम, 1878 बनाया। इसका उद्देश्य यह था कि, भारतीय भाषाओं में प्रकाशित समाचारपत्रों पर बेहतर नियंत्रण स्थापित कर तथा भोली–भाली जनता के मन में सरकार के प्रति दुर्भावना भरने वाली रचनाओं को दमित एवं दण्डित करने के लिए सरकार को मौजूदा कानून से कहीं अधिक प्रभावी साधन उपलब्ध कराना था। इस कानून के द्वारा देशी भाषा और अंग्रेजी भाषा के समाचारपत्रों में भेदभाव किया गया था। इसमें अपराधी को अपील का अधिकार नहीं था। यह नियम भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में वर्नाक्यूलर प्रेस ऐक्ट के नाम से चर्चित हुआ। हालांकि इस कानून का भारत ही नहीं अपितु इंग्लैण्ड के हाउस ऑफ कॉमंस में भी विरोध हुआ। गवर्नर जनरल लॉर्ड रिपन ने ब्रिटिश सरकार के इशारे पर वर्नाक्यूलर प्रेस ऐक्ट को निरस्त कर दिया। इस कानून से बचने के लिए कलकत्ता के अमृत बाजार पत्रिका ने जो अंग्रेजी और बंगला दोनों भाषाओं में छपता था, रातों रात अपने को अंग्रेजी पत्र के रूप में बदलकर इस कानून के दायरे से बाहर हो गया।

मानहानि– व्यक्ति की मान–सम्मान, प्रतिष्ठा की रक्षा करना उसका प्राकृतिक अधिकार है। यह उस व्यक्ति की अर्जित सामाजिक पूंजी है जो एक बार नष्ट हो जाने पर पुनः स्थापित करना अत्यन्त कठिन होता है। यही मानहानि कानून की भावना भी है। किसी व्यक्ति की मानहानि करना अपराध और अपकृत्य दोनों है। वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकारों पर राज्य जिन आधार पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगा सकता है उनमें मानहानि भी शामिल है।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 499 के अंतर्गत मानहानि को परिभाषित करते हुए लिखा गया है, "जो कोई या तो बोले गये या पढ़े जाने के लिए आशयित शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्य द्वारा या दृश्य साधनों द्वारा किसी व्यक्ति के बारे में लांछन इस आशय से लगाता या प्रकाशित करता है कि ऐसे लांछन से ऐसे व्यक्ति की ख्याति की अपहानि की जाये या यह जानते हुए या विश्वास करने के कारण रखते हुए लगाता या प्रकाशित करता है कि ऐसे लांछन से ऐसे व्यक्ति की अपहानि होगी, एतस्मिन पश्चात् उपवादित दशाओं के सिवाय उसके बारे में कहा जाता है कि वह उस व्यक्ति की मानहानि करता है।"

मानहानि दो प्रकार की होती है– मौखिक और लिखित। मौखिक मानहानि को अपवचन कहा जाता है और लिखित मानहानि को अपलेख कहा जाता है। मानहानि करने वाले कृत्य के अनुसार सिविल और आपराधिक मानहानि बनाया गया है। दोषी व्यक्ति को दण्ड स्वरूप क्षतिपूर्ति और कारावास दोनों प्रकार का प्रावधान किया गया है।

सिविल और आपराधिक मानहानि में मुख्य **अंतर** मानहानि करने के आशय के संबंध में है। मानहानि की सिविल कार्यवाही में दोष सिद्धि के लिए आशय सिद्ध करना आवश्यक नहीं है। जबकि आपराधिक कार्यवाही में दोष सिद्धि के लिए यह साबित करना आवश्यक है कि प्रतिवादी का इरादा वादी की मानहानि करने का था। आपराधिक मानहानि कार्यवाही में बचाव के लिए कथन की सत्यता के साथ–साथ उसके लोक कल्याण में होना सिद्ध किया जाना आवश्यक है। सिविल मानहानि में कथन की सत्यता बचाव के लिए काफी है। सिविल मानहानि संहिताबद्ध नहीं है। वह अभी भी इंग्लिश कॉमन लॉ पर आधारित है। जबकि आपराधिक मानहानि संहिताबद्ध है। आइपीसी की धारा 499–502 तक मानहानि के अपराध से संबंधित कानून है।

मानहानि के सिविल मामले में क्षतिपूर्ति की मात्रा मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश द्वारा किए गये क्षति के मूल्यांकन पर निर्भर करता है। यदि वह व्यक्ति जिसकी मानहानि हुई हो वह समाज में उच्च सीन रखता हो तो भारी जुर्माना किया जा सकता है। मानहानि के दोषी समाचारपत्रों पर उनकी उच्च प्रसार संख्या के अनुसार जुर्माने किए जा सकते हैं। कम प्रसार संख्या वालों पर प्रायः कम जुर्माना लगाया जाता है।

प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट के समक्ष, अपराध घटने के तीन वर्ष के भीतर दाखिल किया जाना चाहिए। राज्य के प्रमुख पदों पर आसीन व्यक्तियों और लोकसेवकों के वाद अपराध घटने के छः महीने के अंदर दाखिल किये जाने चाहिए।

अपमान और मानहानि में अंतर मुख्य रूप से व्यक्ति के आत्म सम्मान और प्रतिष्ठा से जुड़ा हुआ है। अपमान व्यक्ति के आत्म सम्मान या गरिमा को चोट पहुंचाता है। अपमान के कारण यदि शांति भंग नहीं होती तो वह कोई कानूनी अपराध नहीं है। मानहानि से व्यक्ति की प्रतिष्ठा दूसरों की नजरों में गिरती है।

समाचारपत्रों की आचार संहिता– पत्रों को भारत की प्रभुसत्ता, एकता, सरकार की सुरक्षा और विदेश नीति को प्रभावित करने वाली जानकारी और टिप्पणियों को प्रकाशित करने से बचना होगा। जाति, समुदाय, वर्ग, धर्म, क्षेत्र या भाषा समूहों से जुड़ी गड़बड़ियों के समाचारों को निष्पक्ष छापना होगा।

❖पत्रों को सरकार और जनता की गतिविधियों को प्रमुखता देनी होगी और राष्ट्रीय एकता तथा आर्थिक, सामाजिक, प्रगति को प्रोत्साहित करना होगा। हिंसा की खुले शब्दों में निंदा करनी होगी।

❖ यह विश्वास दिलाना होगा कि प्रकाशित सामग्री तथ्यपूर्ण है। अनुमान पर आधारित कोई उत्तेजक रिपोर्ट नहीं छापी जाएगी। विश्वास का सदैव सम्मान करना होगा और पेशे की गोपनीयता बनाए रखनी होगी। तथ्यों को तोड़ा–मरोड़ा नहीं जाएगा। और यदि कोई समाचार या टिप्पणी सही नहीं पायी गयी तो भूल सुधार प्रमुखता से छापना होगा।

❖ किसी व्यक्ति के निजी जीवन को प्रभावित करने वाले समाचार को महत्व नहीं देगा। अश्लीलता, अपराध, दुराचरण, एवं अवैध गतिविधियों को प्रोत्साहित करने वाले समाचार प्रकाशित नहीं किये जायेंगे।

❖ समाचारपत्रों को लोकतंत्र, समाजवाद और धर्म निरपेक्षता को प्रोत्साहित एवं प्रतिबिंबित करना होगा।

भारतीय प्रेस परिषद् (press council of india)– भारत में प्रेस परिषद् की सीापना 4 जुलाई 1966 को हुई। लेकिन 1975 के आपात काल के दौरान प्रेस परिषद् अधिनियम को निरस्त कर दिया गया था जो कि 1978 में सत्ता परिवर्तन के बाद अधिनियम पुनर्जीवित हो गया। प्रेस परिषद् में एक अध्यक्ष सहित 28 सदस्य होते हैं। अध्यक्ष का नाम राज्यसभा के सभापति, लोकसभा के अध्यक्ष और परिषद् के सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक व्यकित से मिलकर बनीं समिति द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है।

परिषद् के अध्यक्ष एवं सदस्यों का कार्यकाल तीन वर्ष का होता है। जो कि अवधि पूरा होने के बाद स्वतः ही समाप्त हो जाता है। प्रेस परिषद् कुछ समितियों के माध्यम से कार्य करती है। जांच समिति, वित्त समिति, चयन समिति तथा सर्वप्रयोजन समिति।

प्रेस परिषद् का उद्देश्य समाचारपत्र और समितियों की स्वतंत्रता को कायम रखना, पत्रकारों के उच्च स्तर के अनुरूप उनके लिए आचार संहिता कायम रखना, पत्रकारिता से संबंधित व्यक्तियों से उत्तरदायित्व की भावना तथा जनसेवा की भावना को विकासित करना, उन शिकायतों पर विचार करना

जिनमें आरोप लगाया गया है कि समाचारपत्र ने आचार संहिता के विरूद्ध कोई कार्य किया है।

यदि किसी समाचारपत्र, संपादक या पत्रकार ने कोई व्यावसायिक अनाचार किया है, यदि वह जांच में सही पाया गया तो परिषद् उसकी भर्त्सना करेगा।

परिषद् ऐसे समाचारपत्र या संपादक या पत्रकार को चेतावनी देगा, आलोचना करेगा। परिषद् के निर्णय अंतिम होंगे और किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किये जायेंगे। परिषद् न्यायालय में लम्बित मामलों की जांच नहीं करेगा। परिषद् किसी भी समाचारपत्र या एजेंसी को समाचार अथवा सूचना के स्रोत प्रकट करने के लिए विवश नहीं कर सकता।

संपादकों का चार्टर– संपादकीय नीति लागू करने में संपादक को पूर्ण स्वतंत्रता होगी। संपादक के साथ विचार–विमर्श करके प्रबंध बोर्ड वार्षिक बजट बनायेगा। संपादकीय स्टाफ और विषय वस्तु के संबंध में संपादक का निर्णय अंतिम होगा। किसी कर्मचारी की विशष योग्यता को मान्यता देते हुए उसे वेतन वृद्धि देने का अधिकार संपादक को होगा। संपादकीय विभाग से संबंधित सभी मामलों में संपादक बोर्ड से सीधा संपर्क रखेगा। संपादक पत्र की नीति का संचालन, उच्च मानदण्डों की स्थापना, दबावों का प्रतिरोध, संपादकीय विभाग में सामुदायिक भावना का विकास एवं सामाजिक हितों की निष्पक्षता से रक्षा करेगा। सरकार और मालिकों के आपसी संबंध में संपादक को संपादकीय नीति के संदर्भ में कार्य निर्वहन की स्वतंत्रता होगी। प्रबंध मंडल से मतभेद होने पर संपादक त्यागपत्र दे या हटाया जाये तो वह छः माह की ग्रेच्युटी और वेतन का हकदार होगा।

शासकीय गोपनीयता कानून (official secret act)– शासकीय गुप्तवार्ता अधिनियम,1923 की धारा 5 के अंतर्गत गोपनीयता को व्यापकता प्रदाान की गयी है। गोपनीय सूचनायें लेने और देने वाले दोनों ही इस अधिनियम के तहत अपराधी हैं। सरकार के जो विषय अत्यंत गोपनीय हैं उनमें राष्ट्रीय सुरक्षा, प्रतिरक्षा, विदेश संबंधों जैसे विषय आते हैं। सरकार ऐसे दस्तावेजों को राष्ट्रीय सुरक्षा या सार्वजनिक हित से जुडे नहीं हैं उसे भी गोपनीय घोषित कर सकती है। इस कानून से बचाव तभी होता है जबकि, कोई भी सूचना जानबूझ कर न दी या ली गयी हो और यह न पता हो कि ऐसी सूचना लेने या देने से कानून का उल्लंघन होता है।

प्रेस और पुस्तक पंजीकरण अधिनियम– प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1867 भारत में मुद्रण और प्रकाशन के संबंध में प्राचीनतम प्रेस कानून है। अधिनियम की धारा 3 में भारत में प्रकाशित पुस्तक, समाचारपत्र पर मुद्रक का नाम तथा मुद्रण का स्थान और प्रकाशक का नाम मुद्रित होना जरूरी है। समाचारपत्रों की हर प्रति पर संपादक का नाम छपा हो।

कॉपीराइट एक्ट– कॉपीराइट एक्ट, 1957 इसे प्रतिलिप्याधिकार कानून भी कहते हैं। श्रम, बुद्धि, कौशल के द्वारा उत्पन्न किसी कृति को वैधानिक मान्यता प्रदान करता है। यह वस्तुतः लेखक और प्रकाशक के हितों की सुरक्षा के लिए है। इसके अंतर्गत मौलिक, साहित्यिक, नाट्य संगीतात्मक और कलात्मक कृतियों, चलचित्र या फिल्मों, और रिकार्ड पर कॉपीराइट स्वीकार किये जाते है। कृति का रचयिता कॉपीराइट एक्ट का प्रथम स्वामी होता है। कापीराइट की अवधि रचयिता की मृत्यु के 60 वर्ष बाद तक रहता है। कापीराइट किसी को सौंपा भी जा सकता है। इस अधिनियम का उल्लंघन करने पर एक वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों से दण्डित किया जा सकता है। क्षतिपूर्ति का भी प्रावधान है।

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के अतर्गत कुछ क्षेत्रों को छोड़ कर शेष विभागों से सूचनाएं प्राप्त की जा सकती है। यह न केवल आम आदमी के लिए बल्कि पत्रकारों तथा प्रेस के लिए भी उपयोगी है। शासन और प्रशासन में व्याप्त अनियमितताओं तथा भ्रष्टाचार के विरूद्ध सूचना का अधिकार एक कारगर हथियार साबित हो रहा है।

सूचना के अधिकार की परिभाषा अधिनियम की धारा 2च में सूचना को परिभाषित किया गया है– सूचना से किसी रुप में कोई ऐसी सामग्री जिसके अंतर्गत किसी इलेक्ट्रानिक रुप में धारित अभिलेख, दस्तावेज, ज्ञापन, ई मेल, सलाह, मत, प्रेस विज्ञप्ति, परिपत्र, आदेश, लॉगबुक, संविदा, रिपोर्ट, पत्र, नमूने, मॉडल, आंकड़े संबंधी सामग्री और किसी प्राइवेट निकाय से संबंधित ऐसी सूचना शामिल है, जिसमें उस समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन किसी लोक प्राधिकारी की पहुंच हो सकती है, अभिप्रेत है।

वेतन बोर्ड निर्धारण– वेतन बोर्ड निर्धारण करने की शक्ति केंद्र सरकार में निहित करने संबंधी कानून अधिनियम की धारा 8–13 में दिया गया है। धारा 8–1अ में कहा गया है कि केंद्र सरकार श्रमजीवी पत्रकारों और अन्य समाचार पत्र कर्मचारियों के लिए मजदूरी की दर निर्धारित करे। धारा 8–2 के तहत सरकार मजदूरी की दर समय–समय पर पुनरीक्षित कर सकेगी। वेतन निर्धारण और पुनरीक्षण के लिए वेतन बोर्ड गठित करने का प्रावधान धारा 9 में कहा गया है। धारा 9अ से 9स में कहा गया है कि मजदूरी बोर्ड निर्धारण में अध्यक्ष सहित सात सदस्य नियुक्त होते हैं। किसी हाई कोर्ट या सुप्रीम कोर्ट का वर्तमान या पूर्व न्यायाधीश अध्यक्ष तथा समाचार पत्रों के नियोजकों और श्रमजीवी पत्रकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले 2–2 व्यक्ति तथा 2 सदस्य स्वतंत्र होते हैं।

मजदूरी बोर्ड समाचार पत्र स्थापनों, श्रमजीवी पत्रकारों गैर पत्रकार समाचार पत्र कर्मचारियों तथा इस विषय में रुचि लेने वाले अन्य व्यक्तियों से अभ्यावेदन आमंत्रित करता है। यह लिखित रुप में तय तिथि में बोर्ड को मिलनी चाहिए। बोर्ड अभ्यावेदनों पर विचार करके अपनी सिफारिशें सरकार के पास भेजता है। सरकार सिफारिशें प्राप्त होने के बाद शीघ्रतापूर्वक मजदूरी की दरें नियत या पुनरीक्षित करने संबंधी आदेश जारी कर सकती है। यदि सरकार सिफारिशों में कोई फेर बदल करती है तो उसे सभी संबंधित व्यक्तियों को सूचित करना होता है। केंद्र सरकार के आदेश के प्रभावी होने के बाद प्रत्येक श्रमजीवी पत्रकार और समाचार पत्र कर्मचारी अपने नियोजक द्वारा उस दर पर मजदूरी पाने का अधिकारी हो जाता है।

धारा 17क में समाचार पत्र स्थापनों द्वारा रजिस्टर, अभिलेख और मस्टररोल रखने संबंधी प्रावधान हैं। धारा 18–1 में कहा गया है कि यदि कोई नियोजक इस अधिनियम के किन्हीं उपबंधों का उल्लंघन करता है तो वह अधिकतम 200 रुपये तक के दण्ड का भागी होगा।

साइबर लॉ – कम्प्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल फोन, टेलीफोन आदि माध्यमों से सूचनाओं के आदान–प्रदान से सम्बन्धित विधि को साइबर लॉ कहते हैं। साइबर का अर्थ है संसूचना यानि कम्यूनिकेशन तथा सम्पूर्ण देश में सरकार द्वारा निर्मित, अनुसमर्थित विधान जो कि आचरण व अनुशासन से सम्बन्धित हो और सभी नागरिकों के द्वारा पालन किया जा रहा हो, विधि कहलाता है। साइबर लॉ का अर्थ हुआ सूचनाओं से सम्बन्धित कानून। साइबर लॉ का सम्बन्ध कम्प्यूटर नेटवर्क, सॉफ्टवेयर, हार्ड वेयर, हार्ड डिस्क, इंटरनेट, वेबसाइट, ई मेल, मोबाइल फोन इत्यादि से है। यह एक विस्तृत विषय है जिसका विस्तार उन सभी उपलब्ध सामग्री तक है जो कम्प्यूटर व इंटरनेट पर उपलब्ध सूचनाओं, विविध विषयों की जानकारी, वैयक्तिक जानकारियां, आंकड़े, देश की रक्षा व सुरक्षा से सम्बन्धित अभिलेख आदि से सम्बद्ध हैं। साइबर स्पेस के बारे में विलियम गिब्सन ने अपने एक उपन्यास में लिखा कि, वर्चुअल लोगों की वर्चुअल सम्पत्ति के मामले साइबर लॉ से सम्बन्धित होते हैं। एन.सी. जैन ने अपनी पुस्तक साइबर लॉ में इसको परिभाषित करते हुए कहा कि, 'साइबर स्पेस पर दो व्यक्तियों के द्वारा किए गए ट्रांजिक्शंस को प्रभावित करने से संबंधित विधि को साइबर लॉ कहते हैं।' जैसे कि इमेजरी ट्रांजिक्शन उसे कहते हैं जबकि दो कम्प्यूटरों के द्वारा डाटा का आदान–प्रदान होता है। उन्होंने साइबर लॉ को निम्नलिखित प्रकार से विभक्त किया– संविदाओं से संबंधित विधि, सम्पत्ति, अधिकारों तथा साइबर अपराधों से संबंधित विधि।

साइबर अपराध के अंतर्गत, डिजिटल या इलेक्ट्रानिक हस्ताक्षर जो कि यह प्रमाणित करता है कि जो सूचना या संदेश भेजा गया है वह सत्य है और सम्बन्धित व्यक्ति ने ही भेजा है। इसे 'कोड' के रूप में भी जानते हैं। यह अंकों, अक्षरों या दोनों के मेल से बना इलेक्ट्रानिक हस्ताक्षर होता है जिसे संदर्भित व्यक्ति ही प्रयोग कर सकता है। सूचना और प्रौद्योगिकी के अधिकाधिक प्रयोग से डाटा संरक्षित करने की समस्या उत्पन्न हो रही है। कम्प्यूटर व मोबाइल फोन ई मेल, एसएमएस, एमएमएस भी साइबर अपराध के अंतर्गत आता है। यही नहीं गीत, संगीत, पुस्तकों, कहानियों, डिजाइन, पेंटिंग, डोमेन नाम, कम्प्यूटर वेब साइट, कोड, कम्प्यूटर हार्डवेयर व सॉफ्टवेयर, लिंक, व्यावसायिक चिंह आदि जैसी बौद्धिक संपदा की चोरी भी हो रही है। आर्थिक अपराध, साइबर मानहानि, कूटरचना, ऑनलाइन जुआ, अवैध वस्तुओं को बेचना, अश्लील लेखन, वायरस आक्रमण, साइबर आतंकवाद, हैकिंग आदि अपराध की श्रेणी में आते हैं। कम्प्यूटर में आंकड़ों से छेड़–छाड़, पासवर्ड की चोरी, अनधिकृत प्रवेश, सॉफ्टवेयर की चोरी, आदि का गलत प्रयोग रोकने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के अध्याय 9 व 11 में विभिन्न प्रकार के साइबर अपराधों को स्पष्ट किया है।

प्रसार भारती– भारत सरकार ने 23 नवम्बर 1997 को प्रसार भारती नामक प्रसारण निगम संसद में पारित किया। 1976 में ही दूरदर्शन और आकाशवाणी को अलग कर दिया गया था। 1977 में जनता पार्टी सरकार ने बी. जी. वर्गीस की अध्यक्षता में टीवी और रेडियो की स्वतंत्रता के लिए सुझाव देने के लिए कमेटी गठित की। वर्गीस कमेटी की संस्तृति के अनुसार 1 जनवरी 1979 तक ही रेडियो एवं दूरदर्शन की स्वायत्तता के लिए स्वायत्त ट्रस्ट अस्तित्व में आना चाहिए था। 29 दिसम्बर 1989 को प्रसार भारती विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। सितम्बर 1990 में प्रसार भारती विधेयक अधिनियम का रूप ले सका। सात वर्ष तक यह उपेक्षित रहा। 23 नवम्बर 1997 को प्रसार भारती निगम अस्तित्व में आया। इसका मुख्यालय दिल्ली में है।